परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

❊ जन्मदिवस 19–03–1971 ❊ मुनिदीक्षा–11–05–1989 ❊ आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

गाये जा गीत अपन के

सम्पादक
ब्रह्मचारी धर्मचन्द शास्त्री

प्रकाशक
आचार्यश्री धर्मश्रुत ग्रन्थमाला
दिल्ली

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त-शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

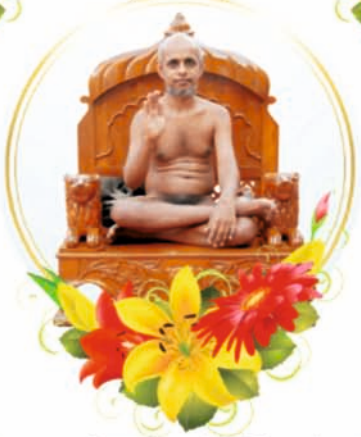

परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि-परिवार

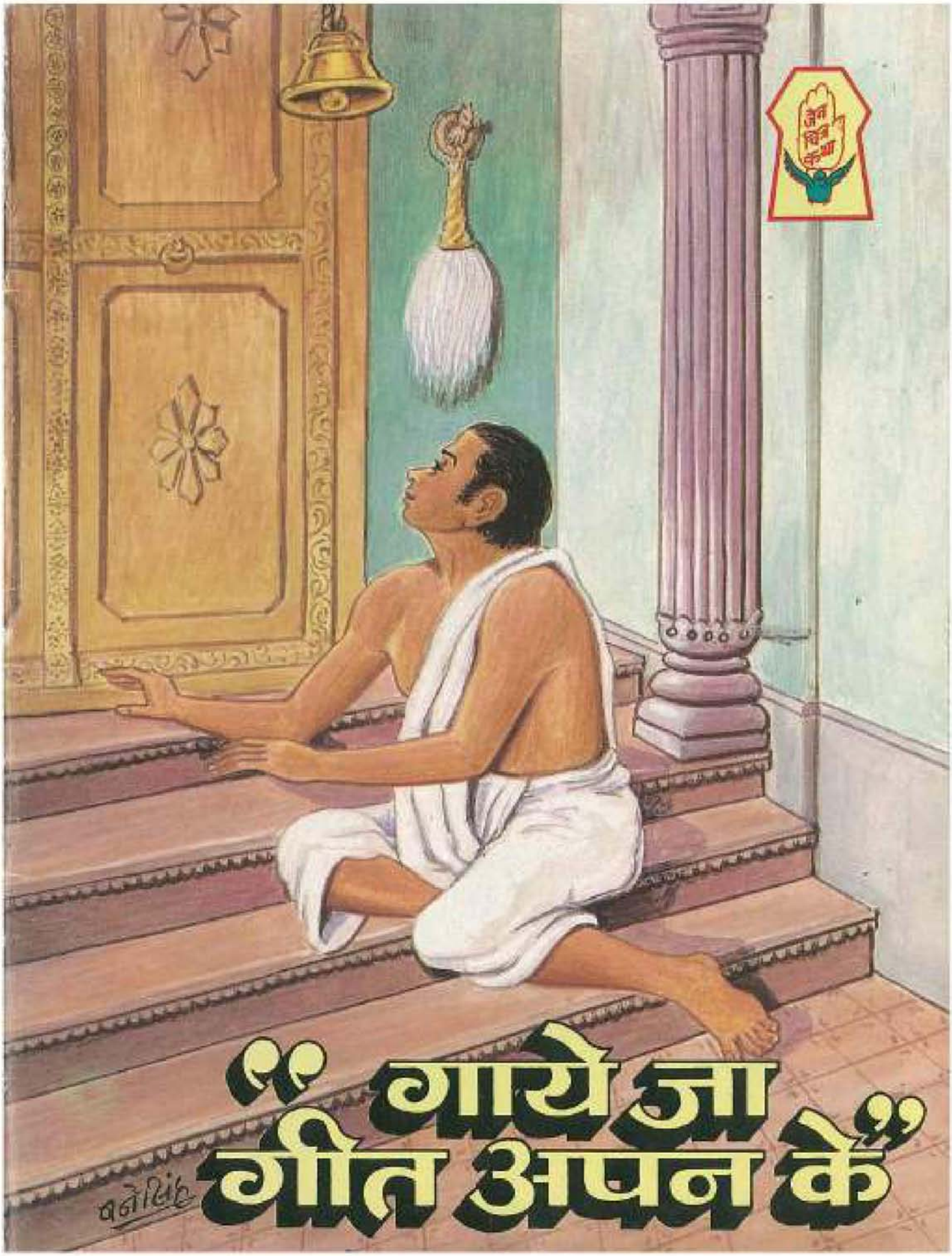
"गाये जा
गीत अपने के"

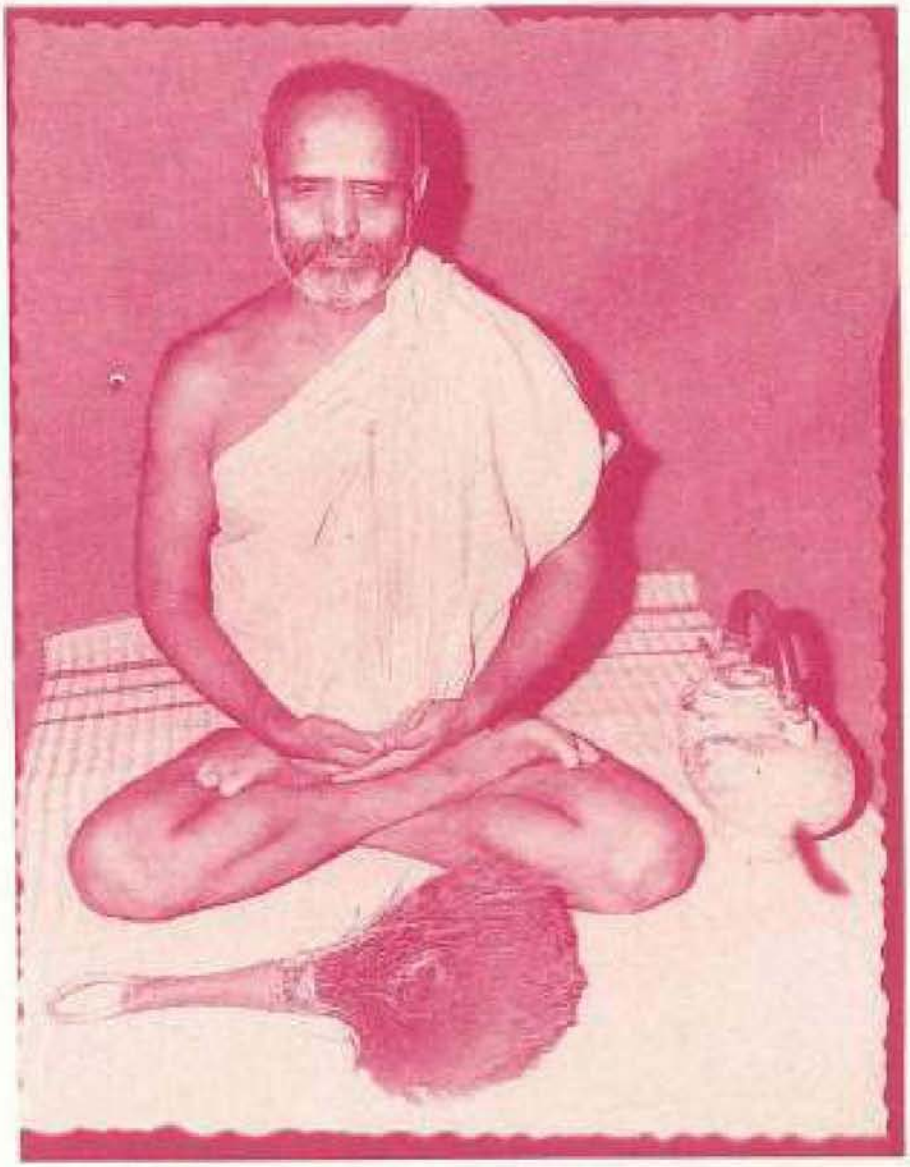

प. पू० क्षु० मनोहरलाल जी महाराज

"गाये जा गीत अपने के"

रेखांकन: बनेसिंह

सेठ प्रकाश चंद पहुँचे अपने एक मित्र धनीराम जौहरी के पास। और ...

भैया मैं बहुत दुखी हूँ। छः महीने पहले मेरी फैक्ट्री आग के कारण जलकर राख हो गई थी, तीन महीने पहले मेरा जवान बेटा चल बसा। क्या करूं, कुछ समझ में नहीं आता ?

भैया कुछ जल-पान करो, सब ठीक हो जायेगा।

इतने में एक ग्राहक आया और धनीराम से बोला...
सेठजी मुझे लड़की के विवाह के लिए रुपयों की बहुत सख्त जरूरत पड़ गई है। आप यह पचास-ग्राम सोने का टुकड़ा लेलो और इसका मूल्य मुझे दे दो।
बैठो, मैं तौलकर देखता हूँ और तुम्हें इसके रुपये दे देता हूँ।
धनीराम ने टुकड़े को तौला और वजन ठीक पचास ग्राम हो गया फिर...
भैया वजन तो पचास ग्राम है परन्तु मैं मूल्य पैंतालीस ग्राम का ही दे सकता हूँ।
ऐसा क्यों सेठजी ?
भैया इसमें पांच ग्राम का खोट है ताकि इसमें पांच-ग्राम कुछ और चीज मिली है जो सोना नहीं है।
ठीक है सेठजी पैंतालीस ग्राम के ही दाम दे दीजिये।

ग्राहक दाम लेकर चला गया। सेठ प्रकाश चंद बैठे सब कुछ देख रहे थे। बोले ....
मित्र, बात कुछ समझ में नहीं आई। मिले हुए सोने व खोट में तुमने सोने का वजन कैसे जान लिया ?
बस भैया, यही तो दृष्टि की करामात है। तुम भी यदि अपनों को ऐसी ही पैनी दृष्टि का प्रयोग करके देखो तो तुम्हें दुखों से मुक्ति मिल जायेगी
कैसे भैया ? समझ में नहीं आया।
भैया यह बताओ जब तुम्हारी फैक्टरी जल गई थी तो तुमने कहा था ना कि मैं नष्ट हो गया, जब तुम्हारा लड़का मरा, तुम रो रो कर कह रहे थे ना कि मैं मर गया और परसों जब तुम नया कुरता पहन कर आये थे तो तुमने कहा था ना कि दर्जी ने मेरा नाश कर दिया क्योंकि कुरता ज़रा ठीक नहीं बना था ?
हाँ, कहा तो था, परन्तु इससे क्या ?
भैया तुम केवल अपने को यानि "मैं" को देखो फिर तुम जान जाओगे कि ये सब पदार्थ - मकान, धन, स्त्री, पुत्र आदि तुम हो ही नहीं, फिर क्यों इन्हें अपने से चिपकाये हुए हो ?

ठीक है भैया ये तो मेरे से बिल्कुल अलग पड़े हैं परन्तु यह शरीर...
ठीक है, शरीर तुमसे मिला-जुला, एकमेक सा जरूर है, परन्तु यह भी तुम से भिन्न ही है क्योंकि मरने पर आत्मा (मैं) चली जाती है और शरीर यहीं पड़ा रह जाता है।
और...
यही नहीं, तुम्हारे साथ लगे ये कर्म भी तुमसे भिन्न है, और यही नहीं तुम्हारे अन्दर उत्पन्न होने वाले राग, द्वेष आदि विकारी भाव भी तुमसे भिन्न है क्योंकि किन्हीं महापुरुषों ने इनको भी अलग करके दिखा दिया है।
तो फिर मैं क्या हूँ?
क्या इन सब को अपने से अलग करते जाओ, तो आखिर में बचे वह "मैं" हूँ।

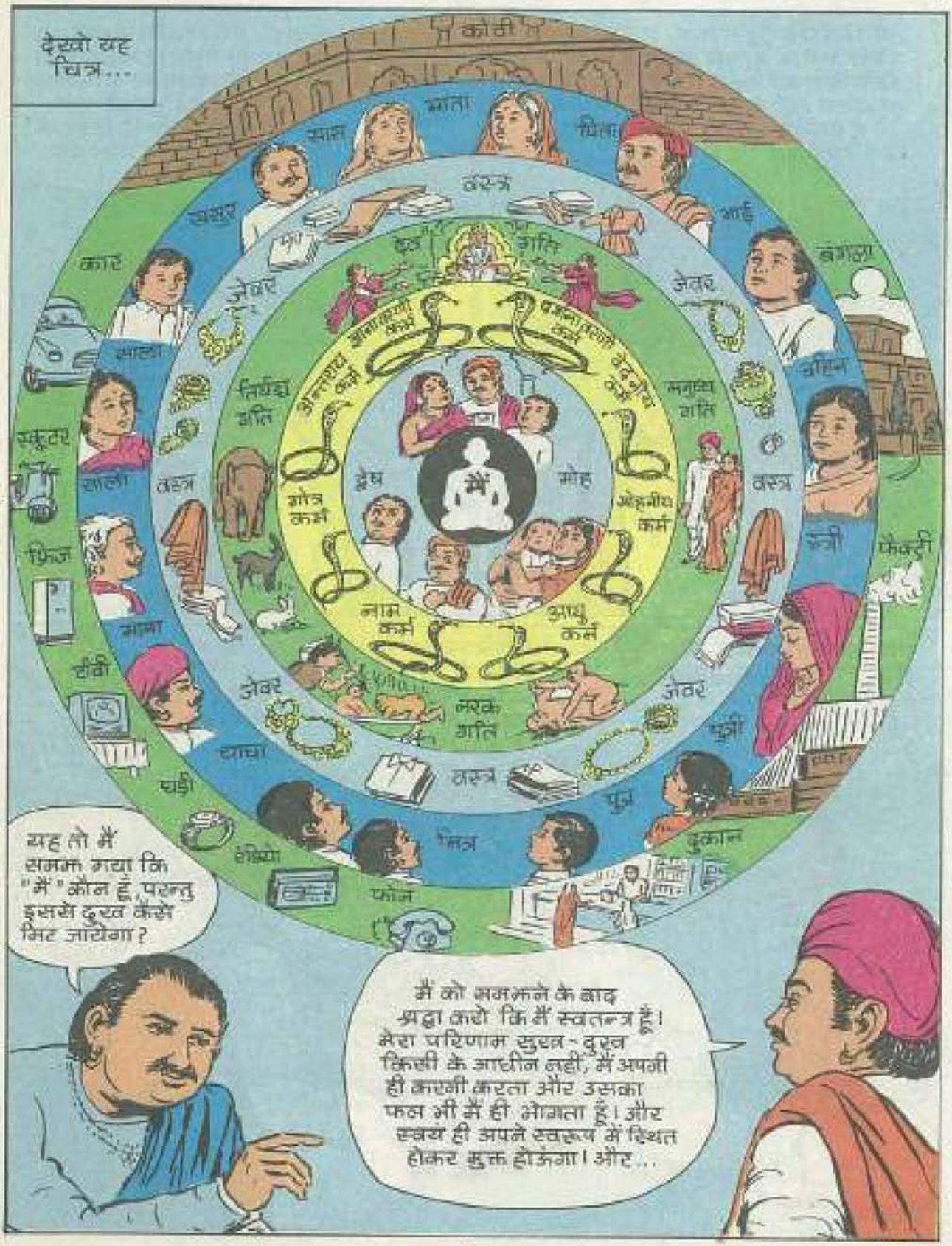

देखो यह चित्र...
कोठी
माता
सास
पिता
ससुर
वस्त्र
भाई
बंगला
कार
जेवर
साला
बहिन
स्कूटर
साली
तिर्यंच गति
मनुष्य गति
द्वेष
मैं
मोह
गोत्र कर्म
मोहनीय कर्म
वस्त्र
स्त्री
फैक्ट्री
फ्रिज
मामा
नाम कर्म
आयु कर्म
टीवी
जेवर
नरक गति
जेवर
पुत्री
चाचा
वस्त्र
घड़ी
पुत्र
मित्र
दुकान
फोन
यह तो मैं समझ गया कि "मैं" कौन हूँ, परन्तु इससे दुख कैसे मिट जायेगा?
मैं को समझने के बाद श्रद्धा करो कि मैं स्वतन्त्र हूँ। मेरा परिणाम सुख-दुख किसी के आधीन नहीं, मैं अपनी ही करनी करता और उसका फल भी मैं ही भोगता हूँ। और स्वयं ही अपने स्वरूप में स्थित होकर मुक्त होऊंगा। और ...

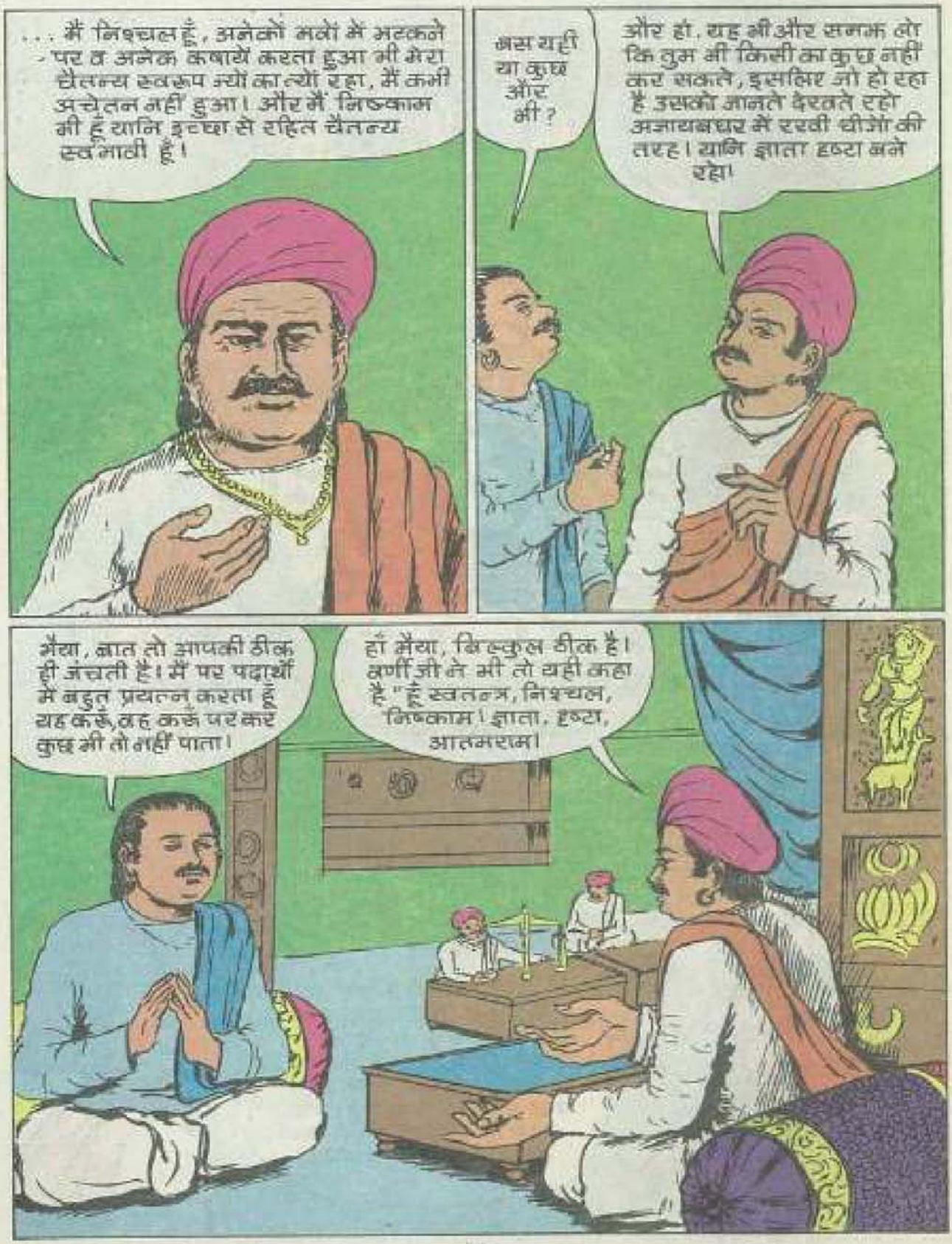
... मैं निश्चल हूँ, अनेकों भवों में भटकने पर व अनेक कषायें करता हुआ भी मेरा चैतन्य स्वरूप ज्यों का त्यों रहा, मैं कभी अचेतन नहीं हुआ। और मैं निष्काम भी हूँ यानि इच्छा से रहित चैतन्य स्वभावी हूँ।
बस यही या कुछ और भी?
और हाँ, यह भी और समझ लो कि तुम भी किसी का कुछ नहीं कर सकते, इसलिए जो हो रहा है उसको जानते देखते रहो अजायबघर में रखी चीजों की तरह। यानि ज्ञाता दृष्टा बने रहो।
भैया, बात तो आपकी ठीक ही जंचती है। मैं पर पदार्थों में बहुत प्रयत्न करता हूँ यह करूँ, वह करूँ पर कर कुछ भी तो नहीं पाता।
हाँ भैया, बिल्कुल ठीक है। वर्णी जी ने भी तो यही कहा है "हे स्वतन्त्र, निश्चल, निष्काम! ज्ञाता, दृष्टा, आत्मराम।

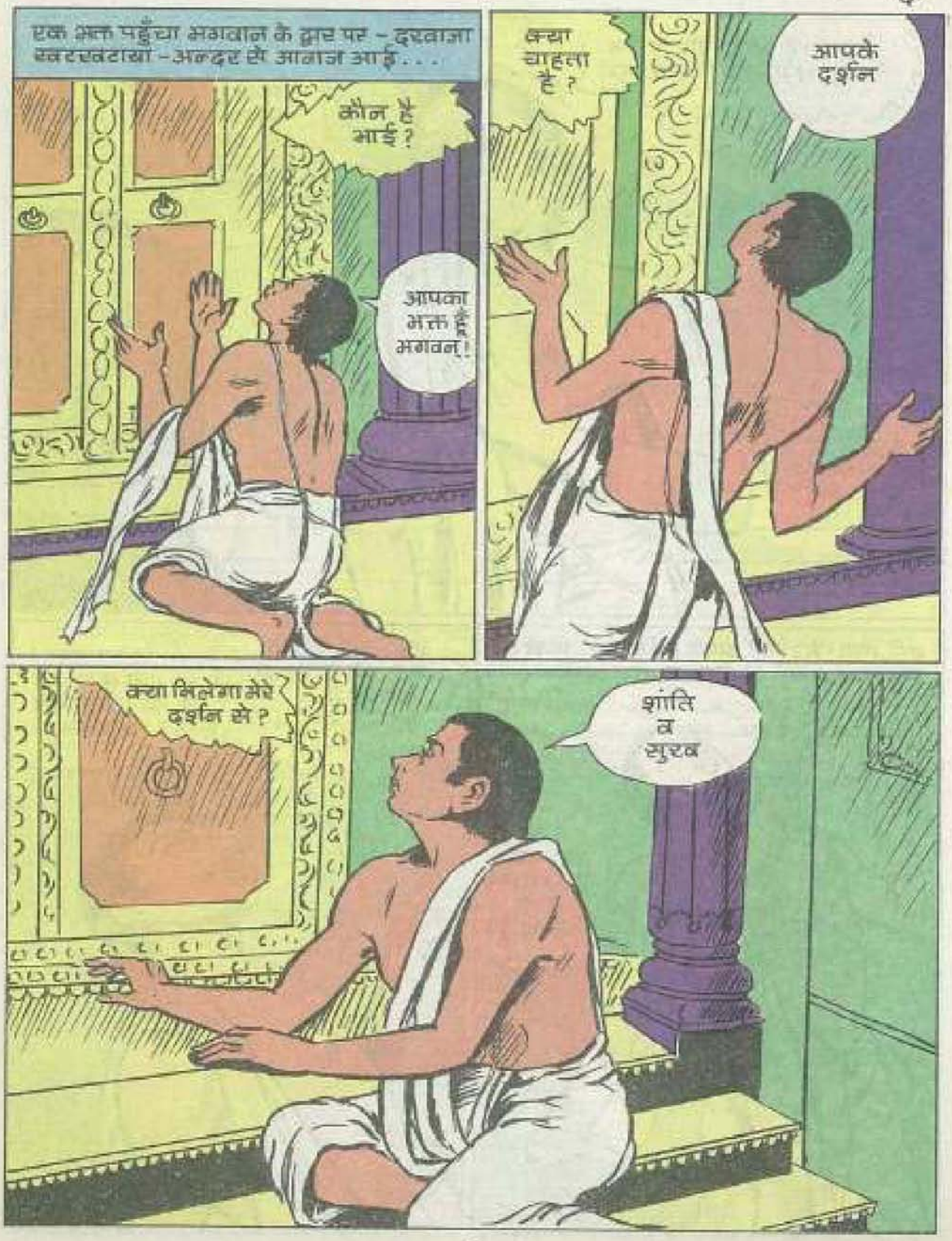
एक भक्त पहुँचा भगवान के द्वार पर – दरवाजा खटखटाया – अन्दर से आवाज आई . . .
कौन है भाई ?
आपका भक्त हूँ भगवन् !
क्या चाहता है ?
आपके दर्शन
क्या मिलेगा मेरे दर्शन से ?
शांति व सुख

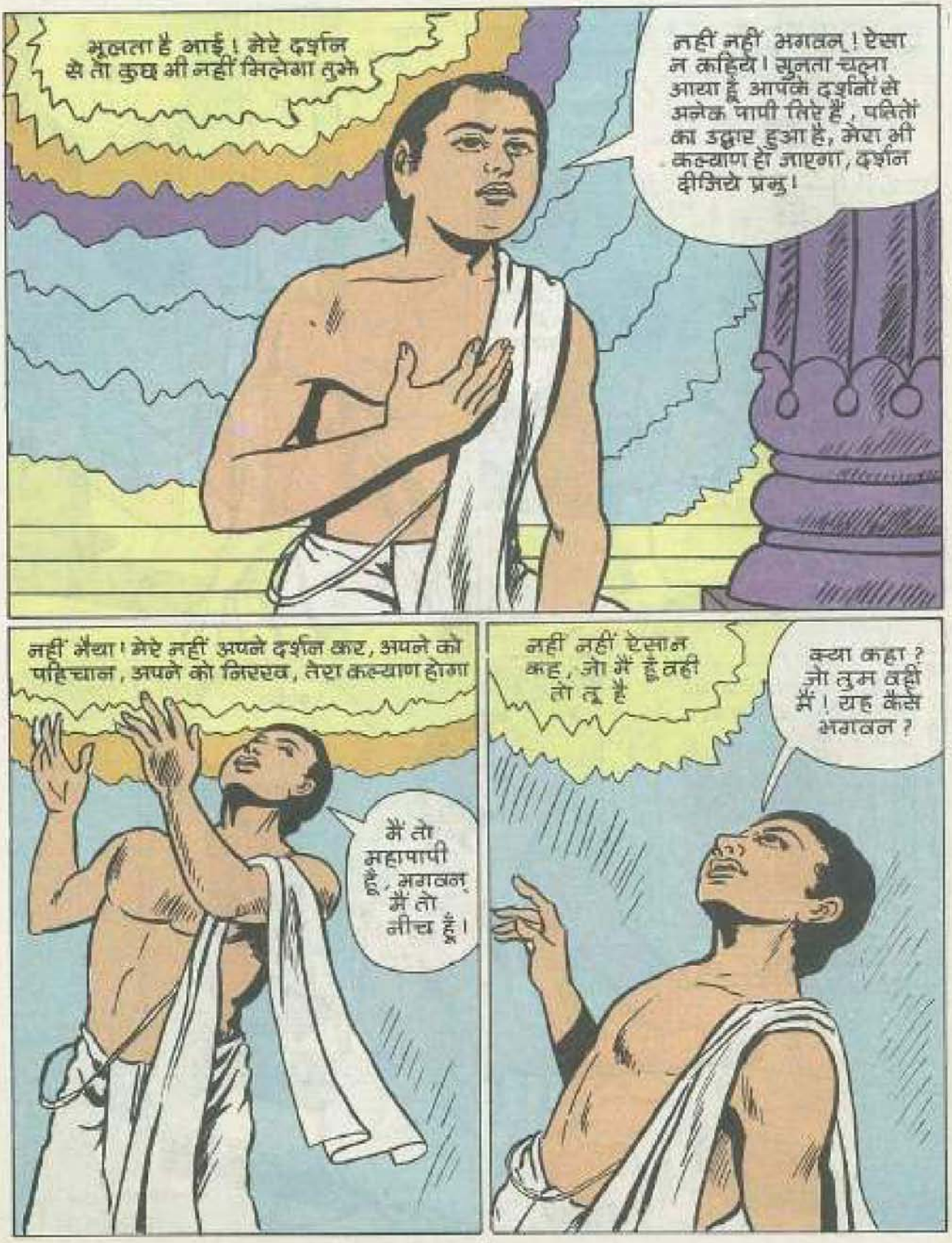
भूलता है भाई ! मेरे दर्शन से तो कुछ भी नहीं मिलेगा तुझे
नहीं नहीं भगवन् ! ऐसा न कहिये। सुनता चला आया हूँ आपके दर्शनों से अनेक पापी तिरे हैं, पतितों का उद्धार हुआ है, मेरा भी कल्याण हो जाएगा, दर्शन दीजिये प्रभु।
नहीं भैया ! मेरे नहीं अपने दर्शन कर, अपने को पहिचान, अपने को निरख, तेरा कल्याण होगा
मैं तो महापापी हूँ, भगवन् मैं तो नीच हूँ।
नहीं नहीं ऐसा न कह, जो मैं हूँ वही तो तू है
क्या कहा ? जो तुम वही मैं ! यह कैसे भगवन ?

देख जैसा तू अब है, पहले मैं भी तो वैसा ही था, तेरे जैसा ही रागी, द्वेषी, मोही, दुखी।

फिर आप भगवान कैसे बन गये ?

मैं क्या हूँ, मेरा स्वरूप क्या है इसका सम्यक् श्रद्धान किया, इसका सच्चा ज्ञान किया, और लग गया अपने से भिन्न राग, द्वेष, मोह आदि को दूर करने में और अब बन गया हूँ शुद्ध, परम शुद्ध निर्विकार।

तो क्या मैं भी आप जैसा बन सकता हूँ कभी भी ?

बन क्यों सकता है, तू तो मुझ जैसा है ही। जो मेरा व्यक्त स्वरूप है वही तो तेरा स्वभाव है और तू जैसा शक्ति रूप से है वैसा ही मेरा रूप प्रगट हो गया है। वर्तमान में, हाँ मुझ में व तुझ में केवल एक अन्तर है और वह अन्तर भी ऊपरी है, स्वभाव में नहीं। तेरे में राग भरा पड़ा है और मैंने उस राग को दूर कर दिया है। तू भी उस राग को दूर कर दे, स्वयं भगवान बन जायेगा। फिर तुझे, किसी के दर्शन की आवश्यकता नहीं रहेगी।

क्या कहा भगवन् ! क्या वह सच है, क्या मैं भगवान बन जाऊंगा ?

क्यों नहीं, क्यों नहीं ! यह बिल्कुल सच है। क्या तुने नहीं सुने मनोहरजी वर्णी के ये शब्द –
"मैं वह हूँ जो हैं भगवान,
जो मैं हूँ वह है भगवान।
अन्तर यही ऊपरी जान,
दो विराग वह राग वितान॥"

सुना तो है भगवन्, पर समझा नहीं उनका मर्म। अब मैं क्या करूं ?

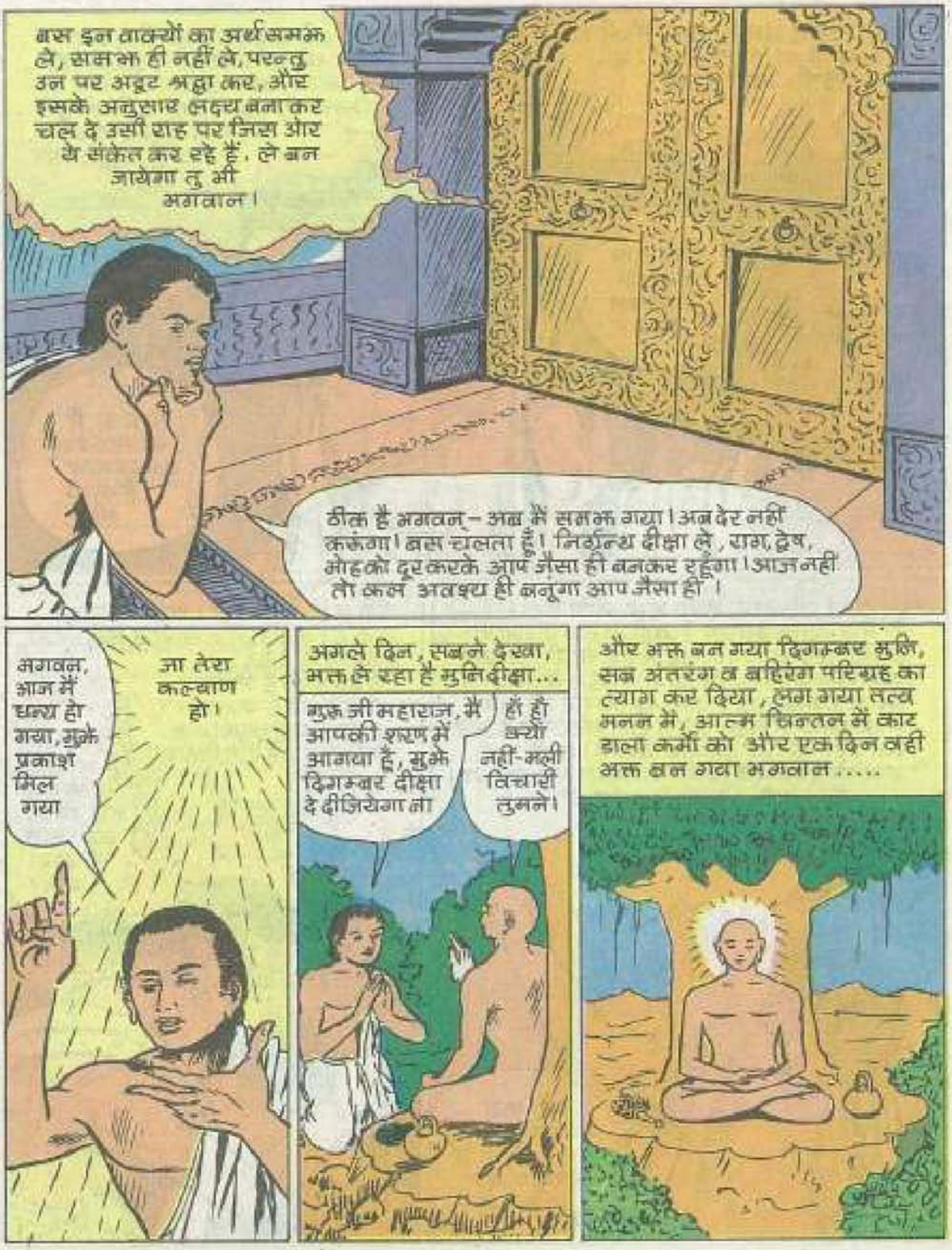
बस इन वाक्यों का अर्थ समझ ले, समझ ही नहीं ले, परन्तु उन पर अटूट श्रद्धा कर, और इसके अनुसार लक्ष्य बना कर चल दे उसी राह पर जिस ओर ये संकेत कर रहे हैं, ले बन जायेगा तु भी भगवान।
ठीक है भगवन् – अब मैं समझ गया। अब देर नहीं करूंगा। बस चलता हूँ। निर्ग्रन्थ दीक्षा लें, राग, द्वेष, मोह को दूर करके आप जैसा ही बनकर रहूंगा। आज नहीं तो कल अवश्य ही बनूंगा आप जैसा ही।
भगवन्, आज मैं धन्य हो गया, मुझे प्रकाश मिल गया
जा तेरा कल्याण हो।
अगले दिन, सब ने देखा, भक्त ले रहा है मुनि दीक्षा...
गुरु जी महाराज, मैं आपकी शरण में आगया हूँ, मुझे दिगम्बर दीक्षा दे दीजियेगा ना
हाँ हाँ क्यों नहीं-भली विचारी तुमने।
और भक्त बन गया दिगम्बर मुनि, सब अंतरंग व बहिरंग परिग्रह का त्याग कर दिया, लग गया तत्व मनन में, आत्म चिन्तन में काट डाला कर्मों को और एक दिन वही भक्त बन गया भगवान.....

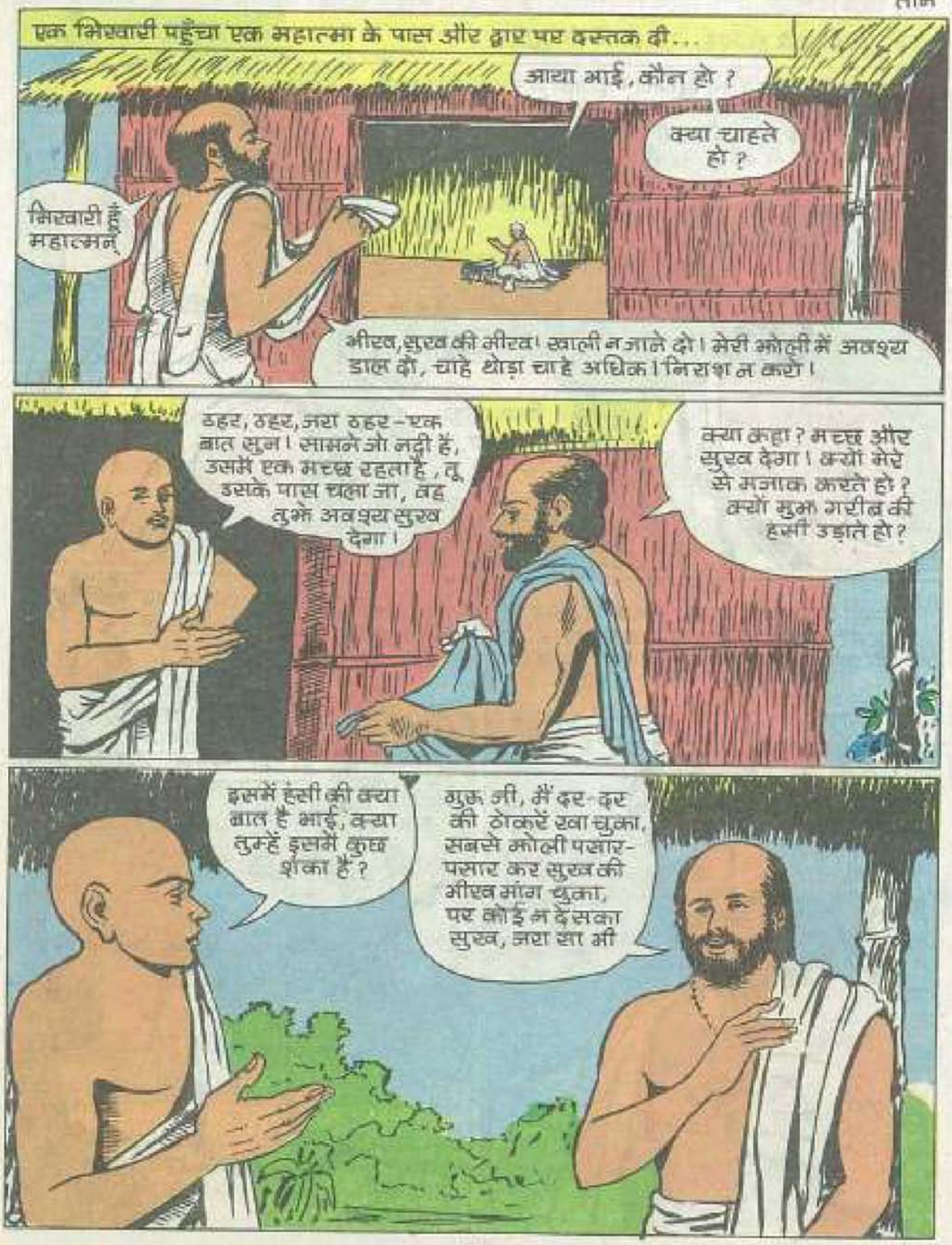
एक भिखारी पहुँचा एक महात्मा के पास और द्वार पर दस्तक दी...
आया भाई, कौन हो ?
क्या चाहते हो ?
भिखारी हूँ महात्मन्
भीख, सुख की भीख। खाली न जाने दो। मेरी झोली में अवश्य डाल दो, चाहे थोड़ा चाहे अधिक। निराश न करो।
ठहर, ठहर, जरा ठहर – एक बात सुन। सामने जो नदी है, उसमें एक मच्छ रहता है, तू उसके पास चला जा, वह तुझे अवश्य सुख देगा।
क्या कहा ? मच्छ और सुख देगा। क्यों मेरे से मजाक करते हो ? क्यों मुझ गरीब की हंसी उड़ाते हो ?
इसमें हंसी की क्या बात है भाई, क्या तुम्हें इसमें कुछ शंका है ?
गुरु जी, मैं दर-दर की ठोकरें खा चुका, सबसे झोली पसार-पसार कर सुख की भीख मांग चुका, पर कोई न देसका सुख, जरा सा भी

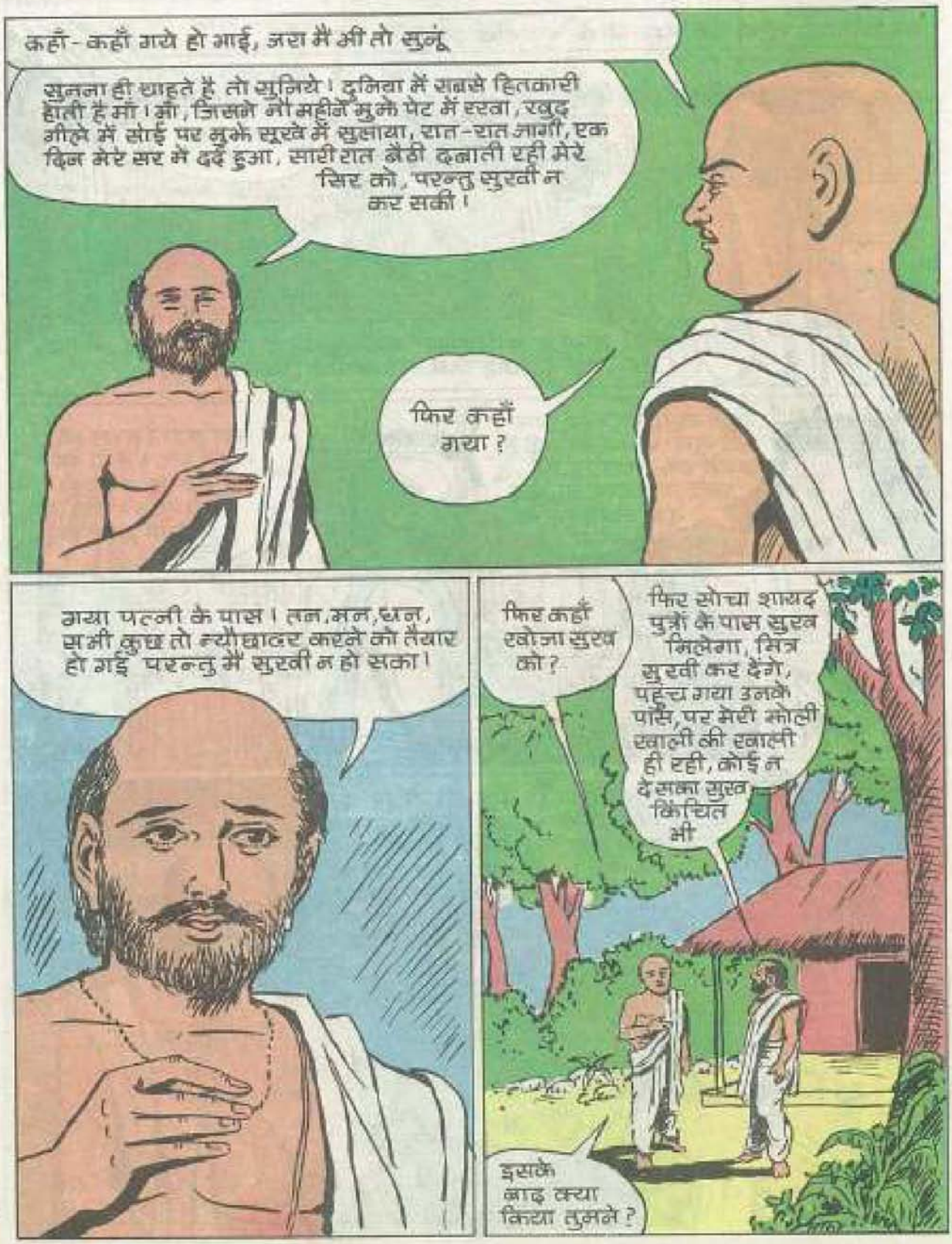
कहाँ-कहाँ गये हो भाई, जरा मैं भी तो सुनूं
सुनना ही चाहते हैं तो सुनिये। दुनिया में सबसे हितकारी होती है माँ। माँ, जिसने नौ महीने मुझे पेट में रखा, खुद गीले में सोई पर मुझे सूखे में सुलाया, रात-रात जागी, एक दिन मेरे सर में दर्द हुआ, सारी रात बैठी दबाती रही मेरे सिर को, परन्तु सुखी न कर सकी।
फिर कहाँ गया?
गया पत्नी के पास। तन, मन, धन, सभी कुछ तो न्यौछावर करने को तैयार हो गई परन्तु मैं सुखी न हो सका।
फिर कहाँ खोजा सुख को?
फिर सोचा शायद पुत्रों के पास सुख मिलेगा, मित्र सुखी कर देंगे, पहुंच गया उनके पास, पर मेरी झोली खाली की खाली ही रही, कोई न दे सका सुख किंचित भी
इसके बाद क्या किया तुमने?

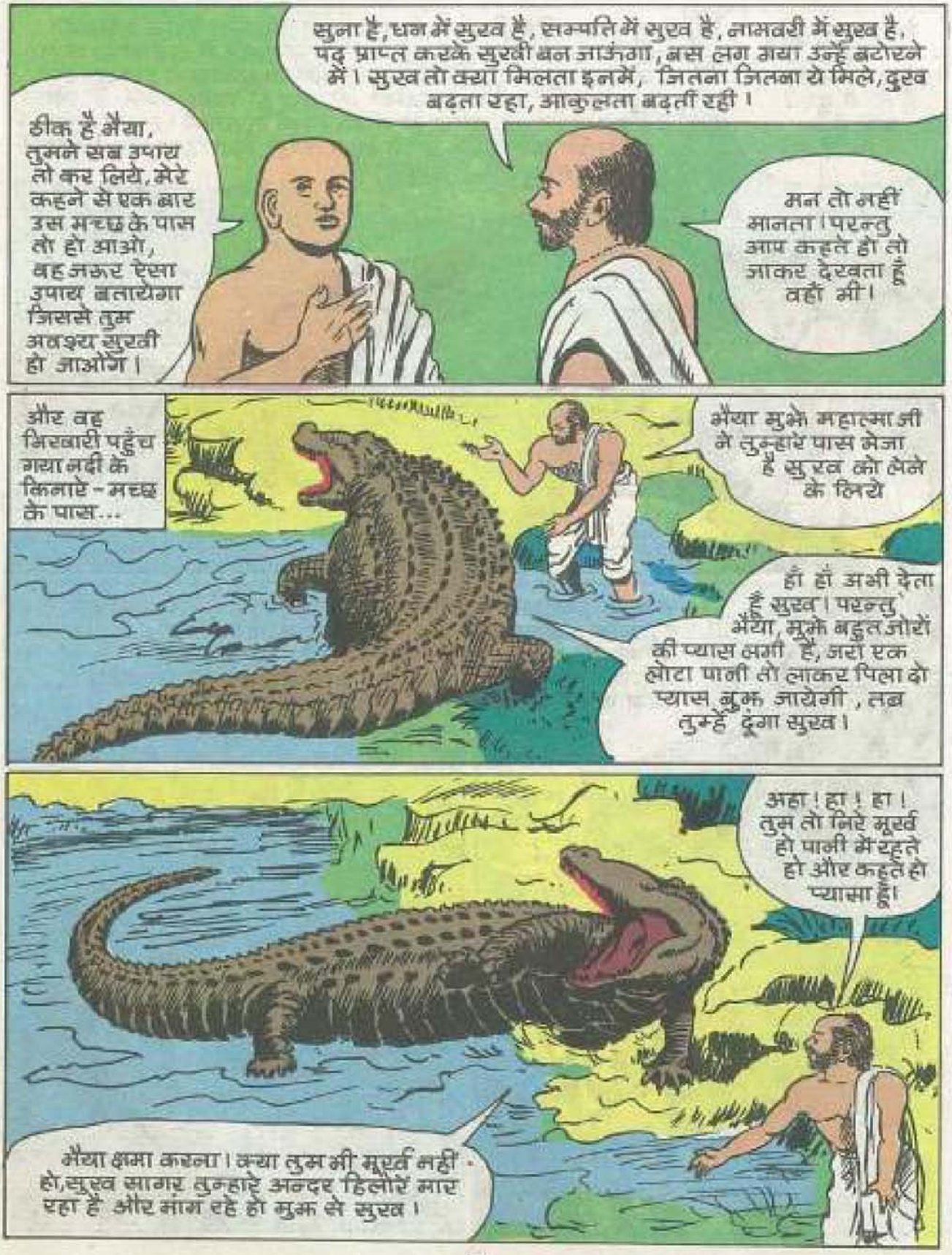

ठीक है भैया, तुमने सब उपाय तो कर लिये, मेरे कहने से एक बार उस मच्छ के पास तो हो आओ, वह जरूर ऐसा उपाय बतायेगा जिससे तुम अवश्य सुखी हो जाओगे।
सुना है, धन में सुख है, सम्पत्ति में सुख है, नामवरी में सुख है, पद प्राप्त करके सुखी बन जाऊंगा, बस लग गया उन्हें बटोरने में। सुख तो क्या मिलता इनमें, जितना जितना ये मिले, दुख बढ़ता रहा, आकुलता बढ़ती रही।
मन तो नहीं मानता। परन्तु आप कहते हो तो जाकर देखता हूँ वहाँ भी।
और वह भिखारी पहुँच गया नदी के किनारे - मच्छ के पास...
भैया मुझे महात्मा जी ने तुम्हारे पास भेजा है सुख को लेने के लिये
हाँ हाँ अभी देता हूँ सुख। परन्तु भैया, मुझे बहुत जोरों की प्यास लगी है, जरा एक लोटा पानी तो लाकर पिला दो प्यास बुझ जायेगी, तब तुम्हें दूंगा सुख।
अहा! हा! हा! तुम तो निरे मूर्ख हो पानी में रहते हो और कहते हो प्यासा हूँ!
भैया क्षमा करना। क्या तुम भी मूर्ख नहीं हो, सुख सागर तुम्हारे अन्दर हिलोरें मार रहा है और मांग रहे हो मुझ से सुख।

मेरे अन्दर सुख भरा पड़ा है, कैसे भैया ? जब ऐसा है तो मैं दुखी क्यों हूँ भाई ?
सुख का ही नहीं, तू तो अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन व अनन्त शक्ति का भी भंडार है। तू तो सिद्ध भगवान के समान है, जहां कोई आकुलता नहीं और आकुलता के अभाव में बस सुख ही सुख, तूने सदैव पर-पदार्थों की ओर ही देखा, उनमें ही खोजा अपने सुख को, उनसे ही भीख मांगी सुख की। उनसे सुख की आशा कर करके अपने ज्ञान को ही गंवा दिया और भिखारी बना दुखी हो रहा है।
तो अब क्या करूं भैया ?
भिखारीपन छोड़ दे, अपने अन्तर में झांक, अपने खजाने को देख बस सुखी हो जायेगा
क्या सचमुच ?
क्यों नहीं, क्यों नहीं। सुनी नहीं तूने आत्मकीर्तन की ये पंक्तियां :-
"सब स्वरूप है सिद्ध समान,
अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान।
किन्तु आश वश खोया ज्ञान,
बना भिखारी निपट अजान ॥"

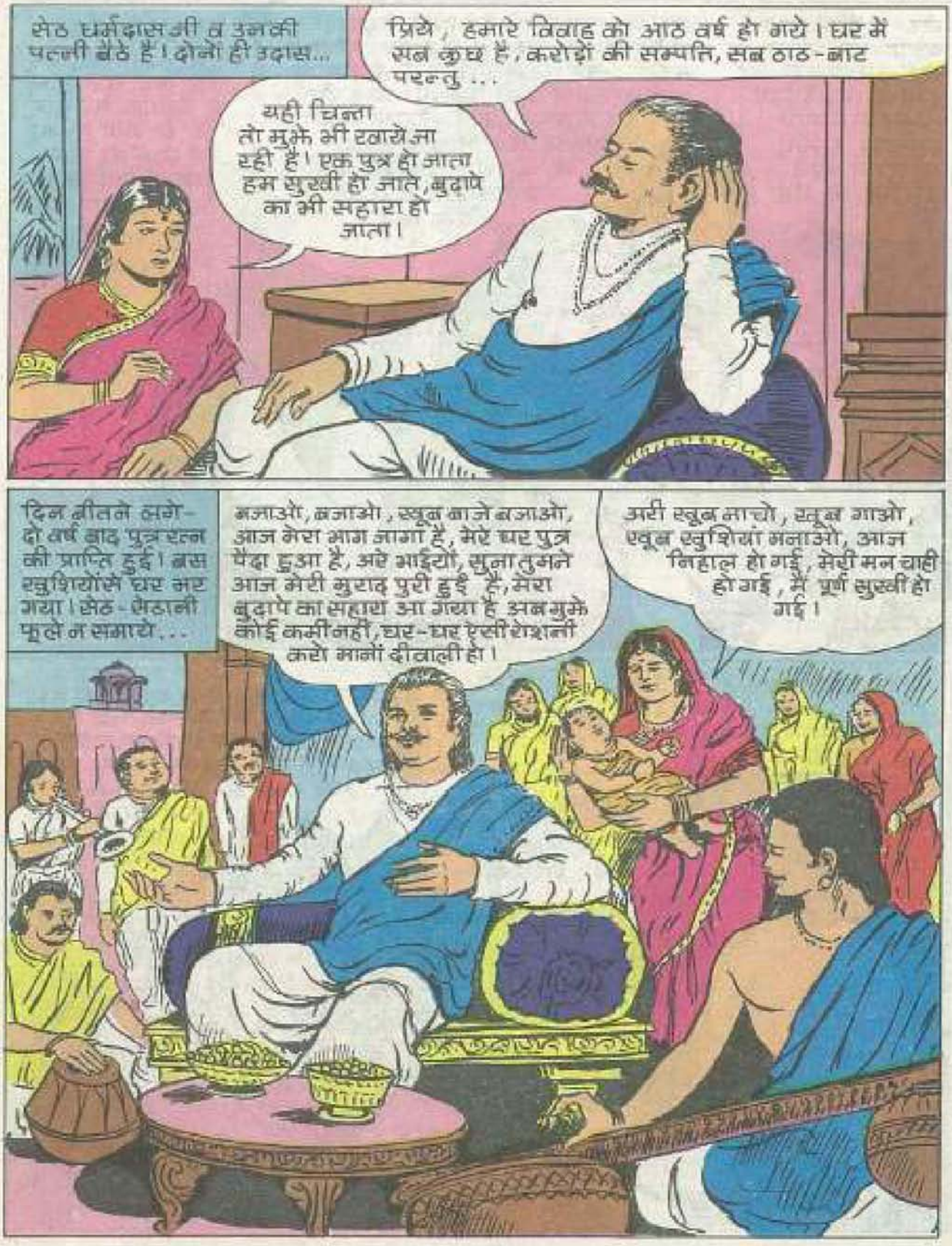
सेठ धर्मदास जी व उनकी पत्नी बैठे हैं। दोनों ही उदास...
प्रिये, हमारे विवाह को आठ वर्ष हो गये। घर में सब कुछ है, करोड़ों की सम्पत्ति, सब ठाठ-बाट परन्तु...
यही चिन्ता तो मुझे भी खाये जा रही है। एक पुत्र हो जाता हम सुखी हो जाते, बुढ़ापे का भी सहारा हो जाता।
दिन बीतने लगे- दो वर्ष बाद पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। बस खुशियोंसे घर भर गया। सेठ-सेठानी फूले न समाये...
बजाओ, बजाओ, खूब बाजे बजाओ, आज मेरा भाग जागा है, मेरे घर पुत्र पैदा हुआ है, अरे भाईयों, सुना तुमने आज मेरी मुराद पुरी हुई है, मेरा बुढ़ापे का सहारा आ गया है अब मुझे कोई कमी नहीं, घर-घर ऐसी रोशनी करो मानों दीवाली हो।
अरी खूब नाचो, खूब गाओ, खूब खुशियां मनाओ, आज निहाल हो गई, मेरी मन चाही हो गई, मैं पूर्ण सुखी हो गई।

सेठ - सेठानी दोनों बड़े प्रसन्न - सोच रहे हैं, लड़का नहीं हुआ था हम बड़े दुखी थे। लड़का हो गया हम सुखी हो गये। मेरे सुखी करने वाला लड़का ही तो है...
अब मैं निहाल हो गई - देखो न कुछ ही वर्षों में हमारा पुत्र बड़ा हो जायेगा, छोटीसी बहुआसी बहू घर में लायेगा, मैं तो उस पर वार-वार कर पानी पिऊंगी। फिर पोता होगा उसकी बाल क्रीड़ाओं से हमारा आंगन खिल-खिला उठेगा - जब वह मुझे 'अम्मा' कह कर पुकारेगा तो बस क्या कहूँ ?
और मेरी भी मत पूछो - आज मैं सिर उठा कर चल सकता हूँ क्योंकि मेरे पुत्र जो हो गया है - वह मेरे नाम को ऐसा चमकायेगा कि बस नगर में मेरा ही मेरा नाम होगा

परन्तु कुछ ही वर्ष बीते थे कि सेठ-सेठानी का भाग्य रूठ गया। लड़का पंद्रह वर्ष का ही हुआ था कि ऐसा बीमार हुआ कि बचने की कोई आशा ही नहीं। एक दिन...
प्रिये, अब क्या होगा ? डाक्टर ने जवाब दे दिया है। बच्चे के बचने की कोई आशा नहीं
हाय ! मैं लुट गई, बरबाद हो गई, क्या-क्या सपने संजोये थे मैंने। क्या सब खाक में मिल जायेंगे। नहीं - नहीं कुछ तो करो जी, किसी तरह रोक लो मेरे प्यारे से, सलोने से बच्चे को। मत जाने दो, बच्चा लौ इसे।

लड़का बीमार पड़ा है, आखरी सांसें गिन रहा है, सेठ जी व सेठानी उसके पास बैठे हैं...

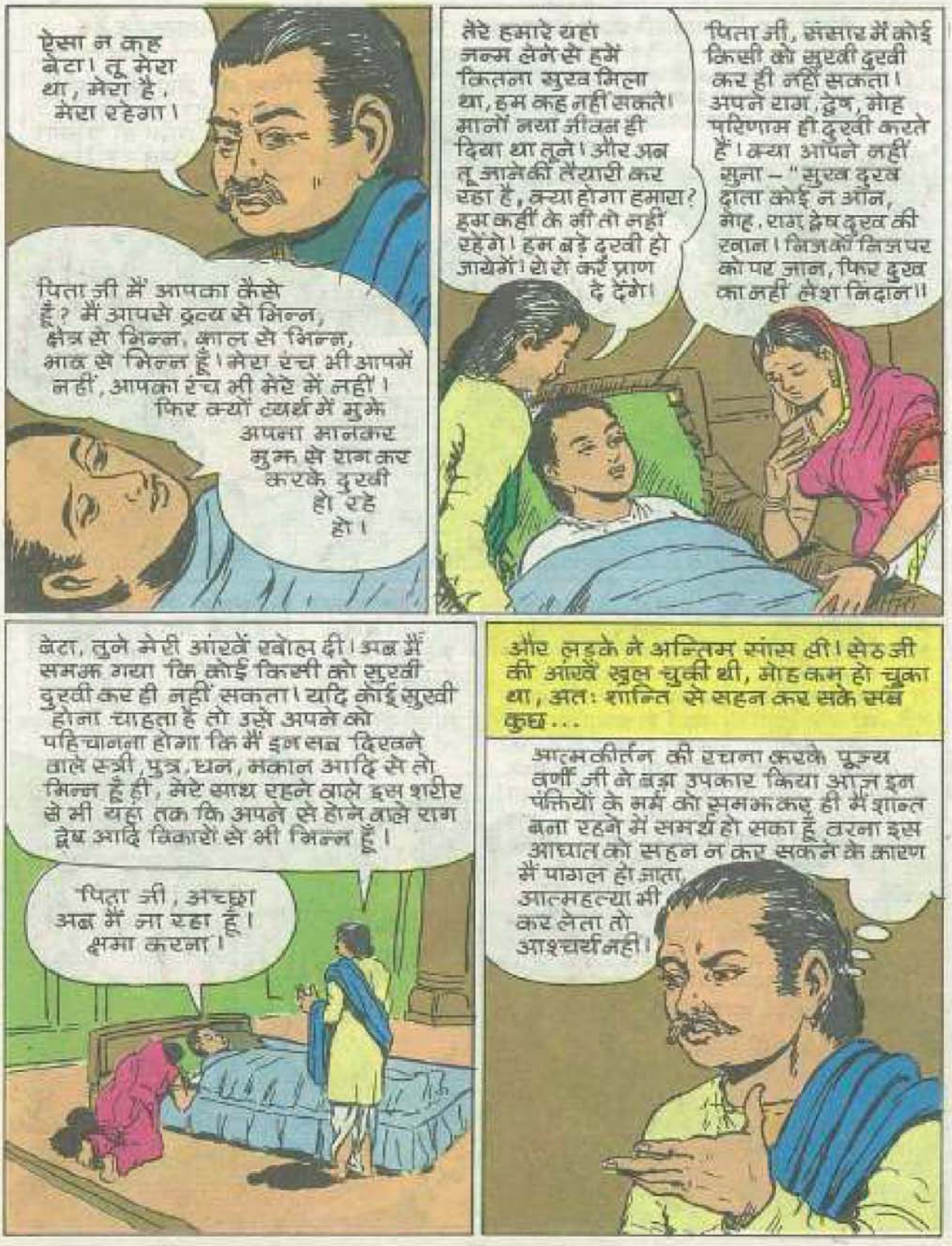
ऐसा न कह बेटा। तू मेरा था, मेरा है, मेरा रहेगा।
पिता जी मैं आपका कैसे हूँ? मैं आपसे द्रव्य से भिन्न, क्षेत्र से भिन्न, काल से भिन्न, भाव से भिन्न हूँ। मेरा रंच भी आपमें नहीं, आपका रंच भी मेरे में नहीं। फिर क्यों व्यर्थ में मुझे अपना मानकर मुझ से राग कर करके दुखी हो रहे हो।
तेरे हमारे यहां जन्म लेने से हमें कितना सुख मिला था, हम कह नहीं सकते। मानों नया जीवन ही दिया था तूने। और अब तू जाने की तैयारी कर रहा है, क्या होगा हमारा? हम कहीं के भी तो नहीं रहेंगे। हम बड़े दुखी हो जायेंगे। रो रो कर प्राण दे देंगे।
पिता जी, संसार में कोई किसी को सुखी दुखी कर ही नहीं सकता। अपने राग, द्वेष, मोह परिणाम ही दुखी करते हैं। क्या आपने नहीं सुना – "सुख दुख दाता कोई न आन, मोह, राग, द्वेष दुख की खान। निज को निज पर को पर जान, फिर दुख का नहीं लेश निदान।।
बेटा, तुने मेरी आंखें खोल दी। अब मैं समझ गया कि कोई किसी को सुखी दुखी कर ही नहीं सकता। यदि कोई सुखी होना चाहता है तो उसे अपने को पहिचानना होगा कि मैं इन सब दिखने वाले स्त्री, पुत्र, धन, मकान आदि से तो भिन्न हूँ ही, मेरे साथ रहने वाले इस शरीर से भी यहां तक कि अपने से होने वाले राग द्वेष आदि विकारों से भी भिन्न हूँ।
पिता जी, अच्छा अब मैं जा रहा हूँ। क्षमा करना।
और लड़के ने अन्तिम सांस ली। सेठ जी की आंखें खुल चुकी थी, मोह कम हो चुका था, अतः शान्ति से सहन कर सके सब कुछ...
आत्मकीर्तन की रचना करके पूज्य वर्णी जी ने बड़ा उपकार किया आज इन पंक्तियों के मर्म को समझकर ही मैं शान्त बना रहने में समर्थ हो सका हूँ वरना इस आघात को सहन न कर सकने के कारण मैं पागल हो जाता, आत्महत्या भी कर लेता तो आश्चर्य नहीं।

अनेक धर्मों के मानने वाले बैठे हैं। चर्चा छिड़ गई
किसका भगवान बड़ा है, किसकी शरण में जाना चाहिये...
'बुद्धं शरणं गच्छामि' बुद्ध की शरण में ही जाने से कल्याण होगा
अरे सब बेकार है, राम नाम ही सत्य है
'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरा न कोई' कृष्ण ही सबकुछ हैं
जिनेन्द्र भगवान की शरण में जाने से ही मुक्ति मिलेगी 'अरहंते शरणं पव्वज्जामि'
नहीं, नहीं विष्णु भगवान ही कल्याण करने वाले हैं

सब लड़ने लगे, झगड़ने लगे, एक दूसरे को भला-बुरा कहने लगे, इतने में एक महात्मा जी वहाँ आ पहुँचे...
क्यों लड़ते झगड़ते हो भाई, बात क्या है?
देखो महात्मन, हम में से कोई बुद्ध के गीत गाता है, कोई विष्णु को अच्छा कहता है, कोई राम को तो कोई हरि को।
जैन लोग तो जिनेन्द्र की शरण के अतिरिक्त किसी की भी शरण को ठीक नहीं मानते। आप ही हमारा न्याय कर दीजिये ना

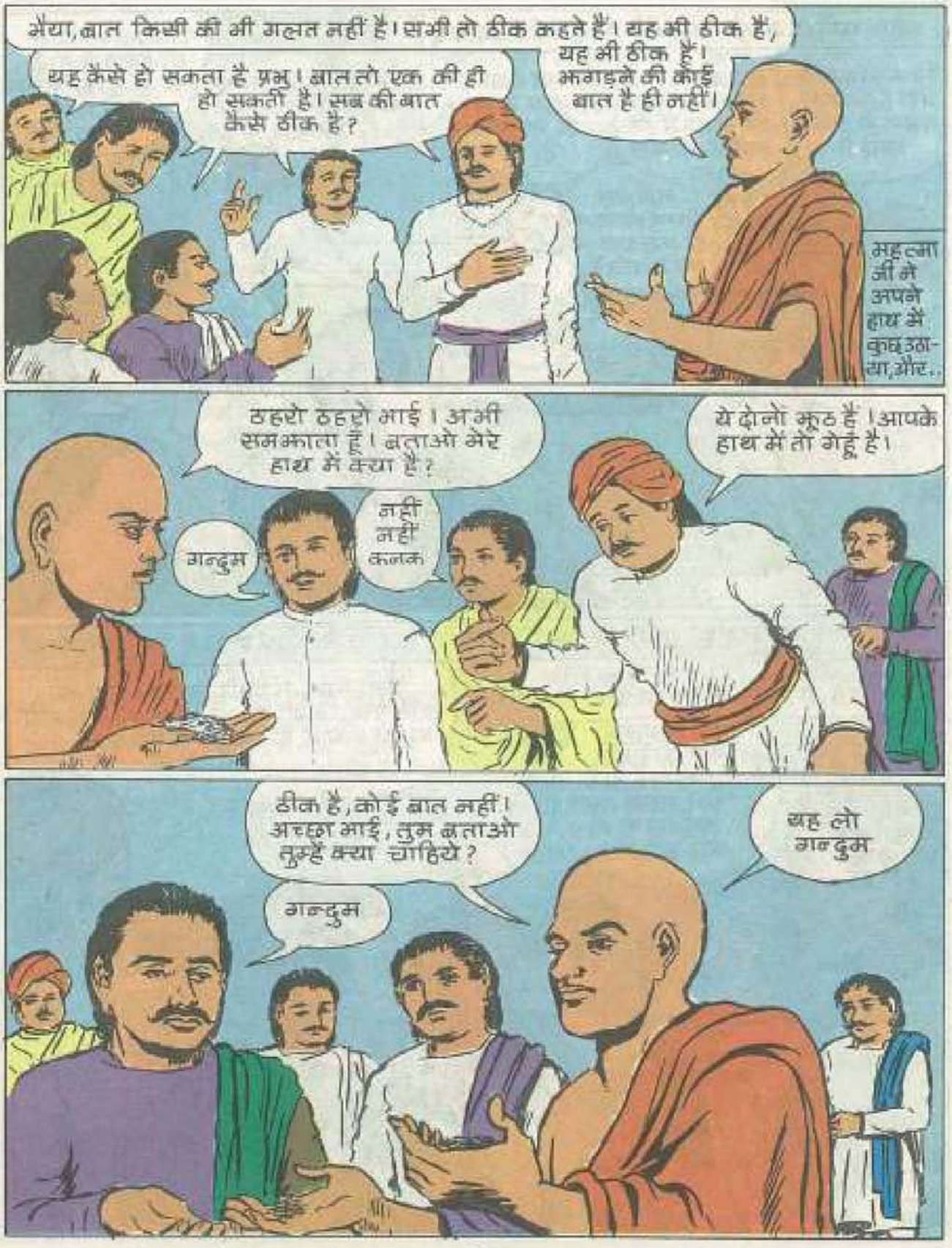
भैया, बात किसी की भी गलत नहीं है। सभी तो ठीक कहते हैं। यह भी ठीक है, यह भी ठीक है। झगड़ने की कोई बात है ही नहीं।
यह कैसे हो सकता है प्रभु। बात तो एक की ही हो सकती है। सब की बात कैसे ठीक है?
महात्मा जी ने अपने हाथ में कुछ उठाया, और..
ठहरो ठहरो भाई। अभी समझाता हूँ। बताओ मेरे हाथ में क्या है?
ये दोनों झूठ हैं। आपके हाथ में तो गेहूँ है।
गन्दुम
नहीं नहीं कनक
ठीक है, कोई बात नहीं। अच्छा भाई, तुम बताओ तुम्हें क्या चाहिये?
यह लो गन्दुम
गन्दुम

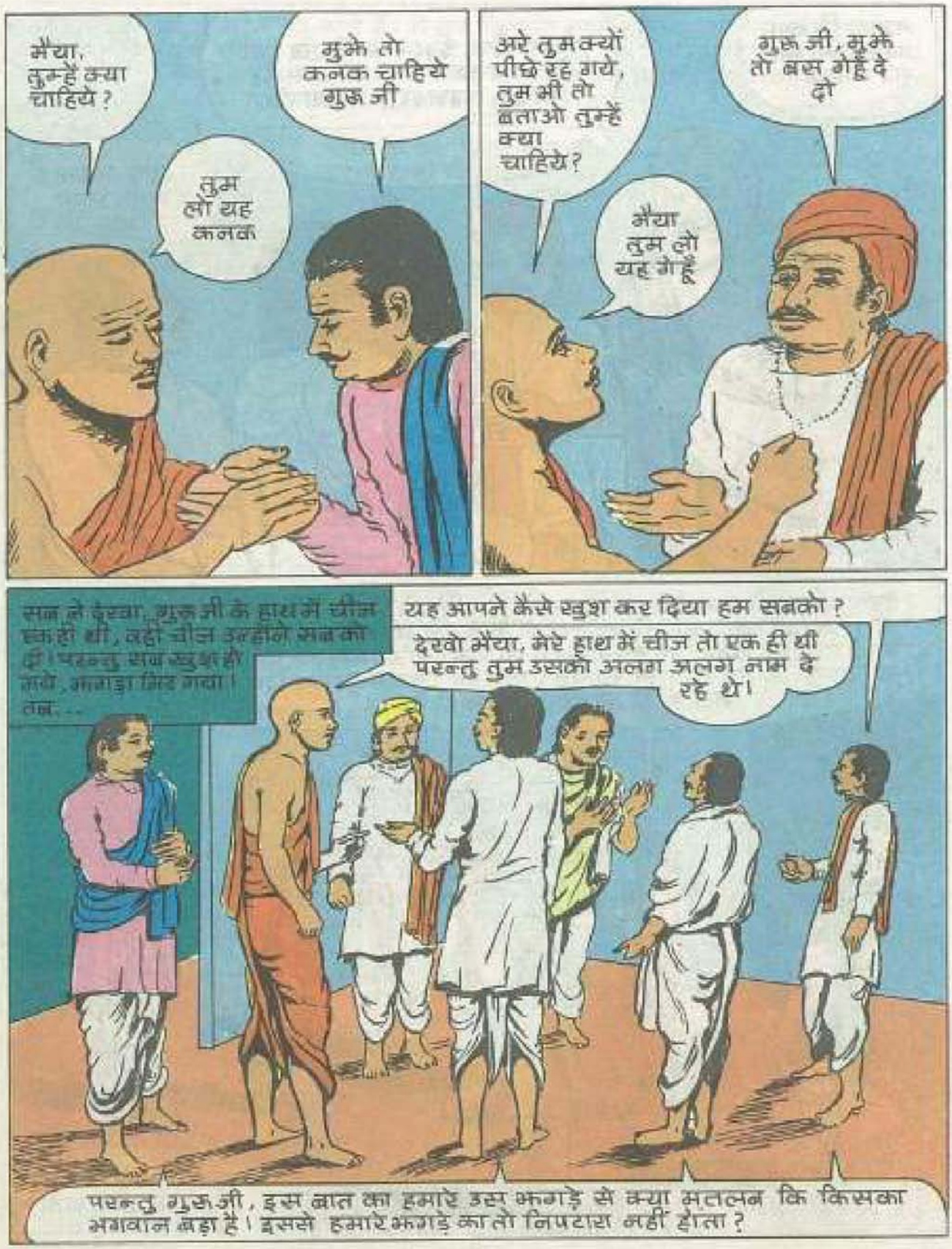
भैया, तुम्हें क्या चाहिये ?
मुझे तो कनक चाहिये गुरु जी
तुम लो यह कनक
अरे तुम क्यों पीछे रह गये, तुम भी तो बताओ तुम्हें क्या चाहिये ?
गुरु जी, मुझे तो बस गेहूँ दे दो
भैया तुम लो यह गेहूँ
सब ने देखा, गुरु जी के हाथ में चीज़ एक ही थी, वही चीज़ उन्होंने सब को दी। परन्तु सब खुश हो गये, झगड़ा मिट गया। तब...
यह आपने कैसे खुश कर दिया हम सबको ?
देखो भैया, मेरे हाथ में चीज़ तो एक ही थी परन्तु तुम उसको अलग अलग नाम दे रहे थे।
परन्तु गुरु जी, इस बात का हमारे इस झगड़े से क्या मतलब कि किसका भगवान बड़ा है। इससे हमारे झगड़े का तो निपटारा नहीं होता ?

झगड़ा मिटेगा, अवश्य मिटेगा, मेरे आइयों
जिन, शिव, ईश्वर आदि सब एक आत्मा स्वरूप के ही तो नाम हैं। सब एक सहज शुद्ध आत्मा ही तो हैं।
कैसे?
कुछ समझ में नहीं आया गुरू जी

देखो भैया, जो राग, द्वेष, आदि कषायों को जीते सो जिन; जो स्वयं सुख स्वरूप है सो शिव; जो स्वयं अपनी अवस्थाओं के करने में प्रभु है सो ईश्वर; अपनी परिणतियों को बनाये सो ब्रह्मा; जो स्वयं में रमे सो राम; जो अपनी ज्ञान क्रियाओं से सर्वत्र व्यापक सो विष्णु; जो सर्व ज्ञाता हो सो बुद्ध; पापों को जिसने दूर कर दिया सो हरि। नाम भेद भले ही हों पर वस्तु तो एक ही है ना।
बात तो आपकी ठीक सी ही जंचती है महात्मन्।

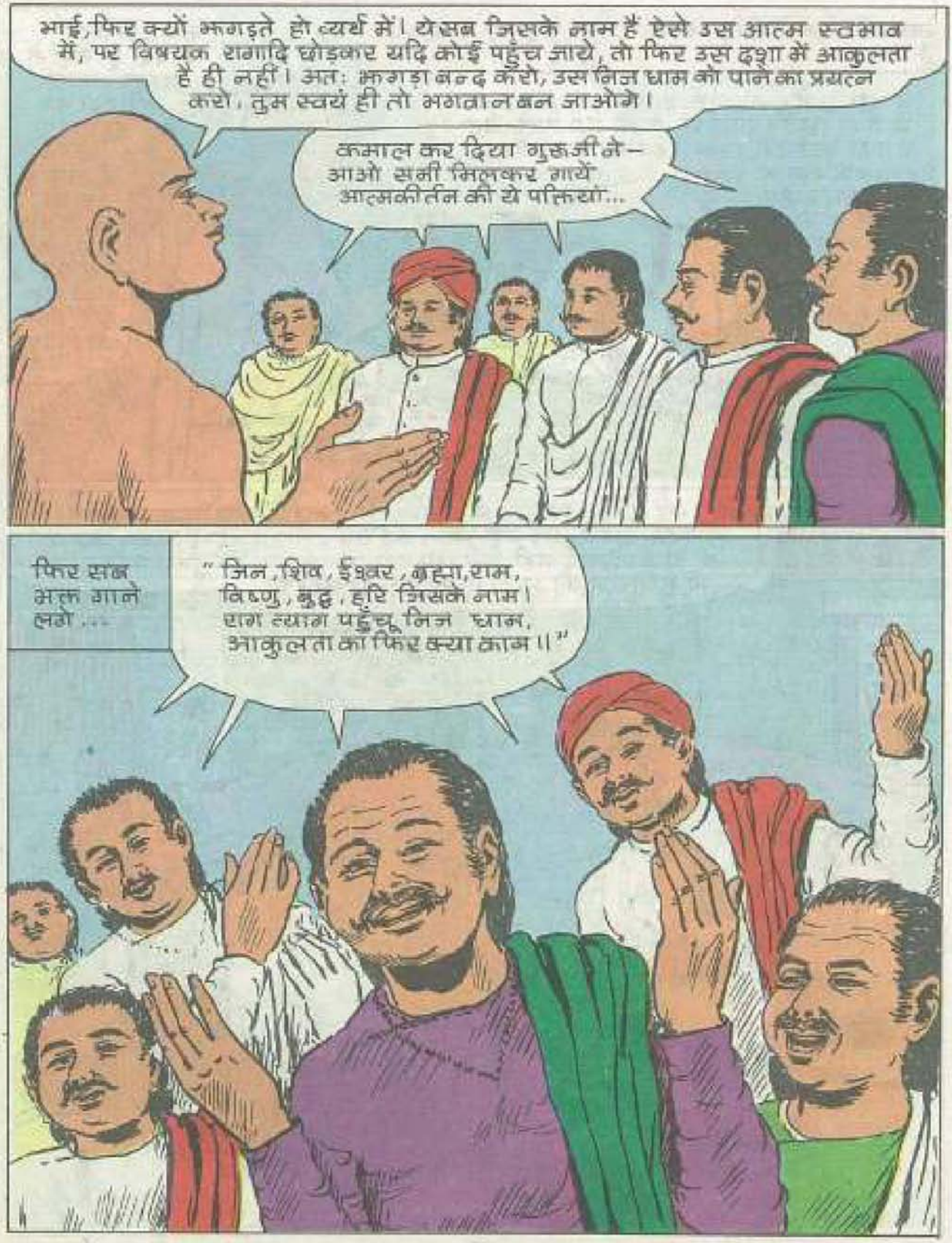
भाई, फिर क्यों झगड़ते हो व्यर्थ में। ये सब जिसके नाम हैं ऐसे उस आत्म स्वभाव में, पर विषयक रागादि छोड़कर यदि कोई पहुँच जाये, तो फिर उस दशा में आकुलता है ही नहीं। अतः झगड़ा बन्द करो, उस निज धाम को पाने का प्रयत्न करो। तुम स्वयं ही तो भगवान बन जाओगे।
कमाल कर दिया गुरुजी ने – आओ सभी मिलकर गायें आत्मकीर्तन की ये पंक्तियां...
फिर सब भक्त गाने लगे...
" जिन, शिव, ईश्वर, ब्रह्मा, राम,
विष्णु, बुद्ध, हरि जिसके नाम।
राग त्याग पहुँचू निज धाम,
आकुलता का फिर क्या काम।।"

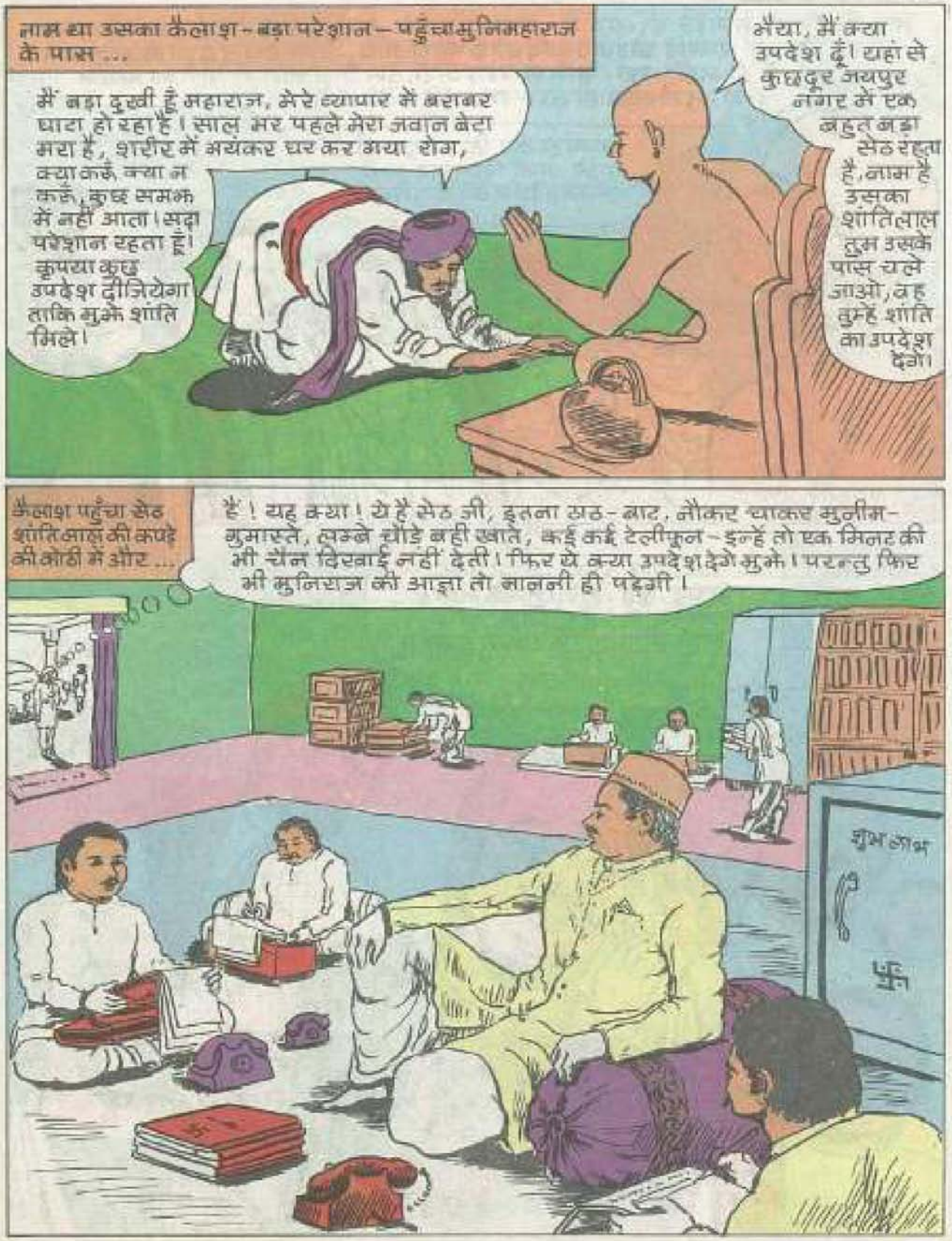
नाम था उसका कैलाश - बड़ा परेशान - पहुँचा मुनिमहाराज के पास ...
मैं बड़ा दुखी हूँ महाराज, मेरे व्यापार में बराबर घाटा हो रहा है। साल भर पहले मेरा जवान बेटा मरा है, शरीर में भयंकर घर कर गया रोग, क्या करूँ, क्या न करूँ, कुछ समझ में नहीं आता। सदा परेशान रहता हूँ। कृपया कुछ उपदेश दीजियेगा ताकि मुझे शांति मिले।
भैया, मैं क्या उपदेश दूँ। यहां से कुछ दूर जयपुर नगर में एक बहुत बड़ा सेठ रहता है, नाम है उसका शांतिलाल तुम उसके पास चले जाओ, वह तुम्हें शांति का उपदेश देगा।
कैलाश पहुँचा सेठ शांतिलाल की कपड़े की कोठी में और ...
हैं! यह क्या! ये है सेठ जी, इतना ठाठ-बाट, नौकर चाकर मुनीम-गुमाश्ते, लम्बे चौड़े बही खाते, कई कई टेलीफून - इन्हें तो एक मिनट की भी चैन दिखाई नहीं देती। फिर ये क्या उपदेश देंगे मुझे। परन्तु फिर भी मुनिराज की आज्ञा तो माननी ही पड़ेगी।
शुभ लाभ

सेठ जी मुझे महाराज श्री ने आपके पास भेजा है। मैं बड़ा परेशान हूँ। कृपया मुझे कुछ उपदेश दीजिये ताकि मेरे जीवन में कुछ शांति आ सके।

भैया, ठीक है। रहो यहां कुछ दिन

दो महीने बाद – एक दिन मुनीम जी भागे-भागे आये, और ...

सेठ जी, सेठ जी

क्या बात है? क्यों घबड़ाये हो?

गजब हो गया सेठ जी, बम्बई से तार आया है। जिस जहाज से हमारा माल जा रहा था वह जहाज डूब गया है। सारा माल नष्ट हो गया है। दस लाख रुपये का नुकसान – अब क्या होगा?

मुनीम जी, कुछ अनहोनी तो नहीं हुई। जाओ अपना काम करो।

कैलाश ने सब कुछ देखा – भौचक्का सा रह गया बेचारा। परन्तु बोला कुछ नहीं। वहीं रहते-रहते तीन महीने और बीत गये। फिर एक दिन...

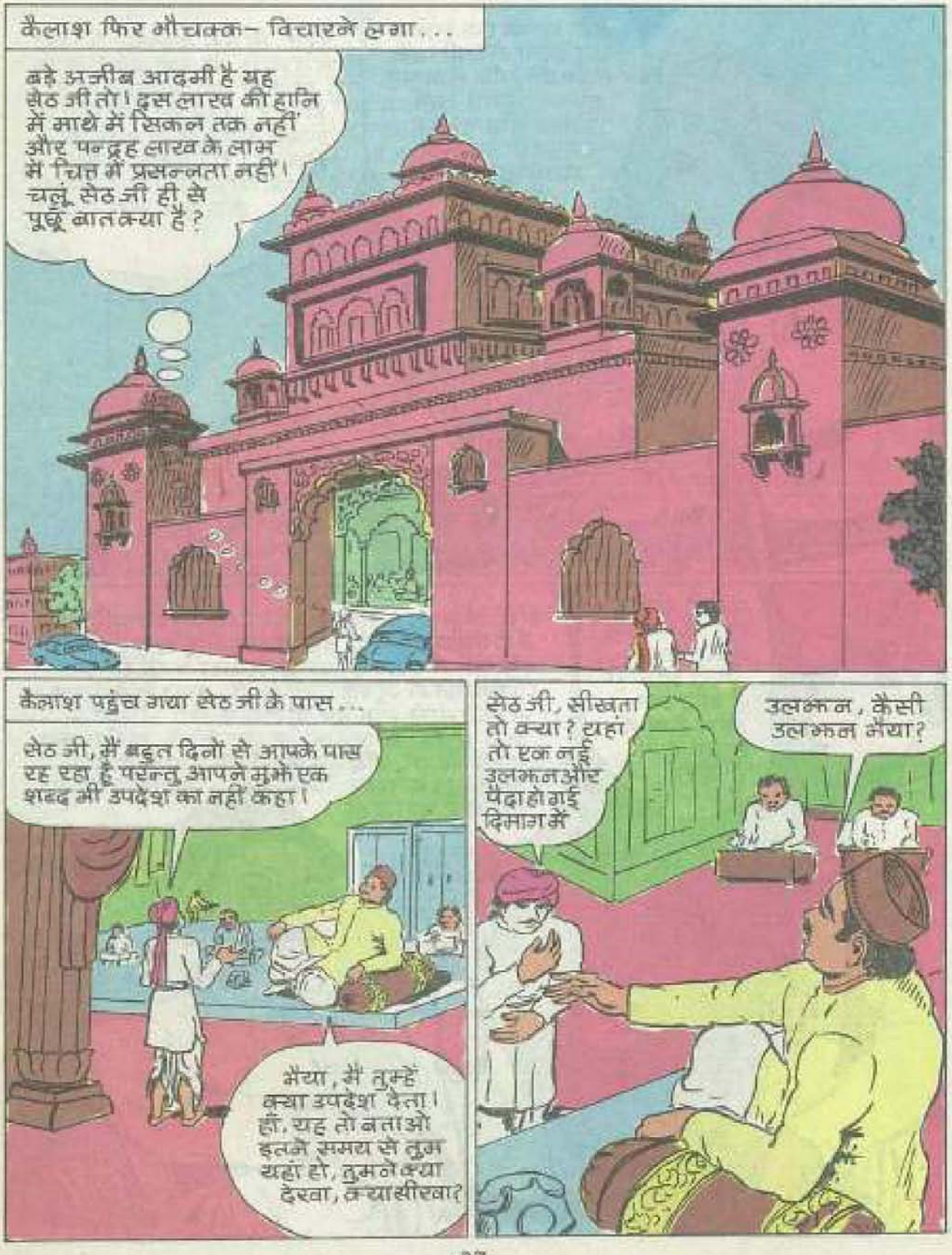
कैलाश फिर भौचक्का– विचारने लगा...
बड़े अजीब आदमी हैं यह सेठ जी तो! दस लाख की हानि में माथे में सिकन तक नहीं और पन्द्रह लाख के लाभ में चित्त में प्रसन्नता नहीं। चलूं, सेठ जी ही से पूछूं बात क्या है?
कैलाश पहुंच गया सेठ जी के पास...
सेठ जी, मैं बहुत दिनों से आपके पास रह रहा हूं परन्तु आपने मुझे एक शब्द भी उपदेश का नहीं कहा।
भैया, मैं तुम्हें क्या उपदेश देता। हाँ, यह तो बताओ इतने समय से तुम यहां हो, तुमने क्या देखा, क्या सीखा?
सेठ जी, सीखता तो क्या? यहां तो एक नई उलझन और पैदा हो गई दिमाग में
उलझन, कैसी उलझन भैया?

मैंने आपमें एक अजीब बात देखी सेठ जी! दस लाख की हानि में आपने तनिक विषाद नहीं किया और पन्द्रह लाख के लाभ में- मानों कुछ हुआ ही नहीं।
भैया, तो तुम देखकर भी नहीं समझे। मैं कुछ करने वाला हूँ ही नहीं। जो होना होता है होता है। वस्तु का परिणमन उसके उपादान से स्वयं ही होता है। पर पदार्थ उसमें निमित्त तो होता है परन्तु कर कुछ नहीं सकता

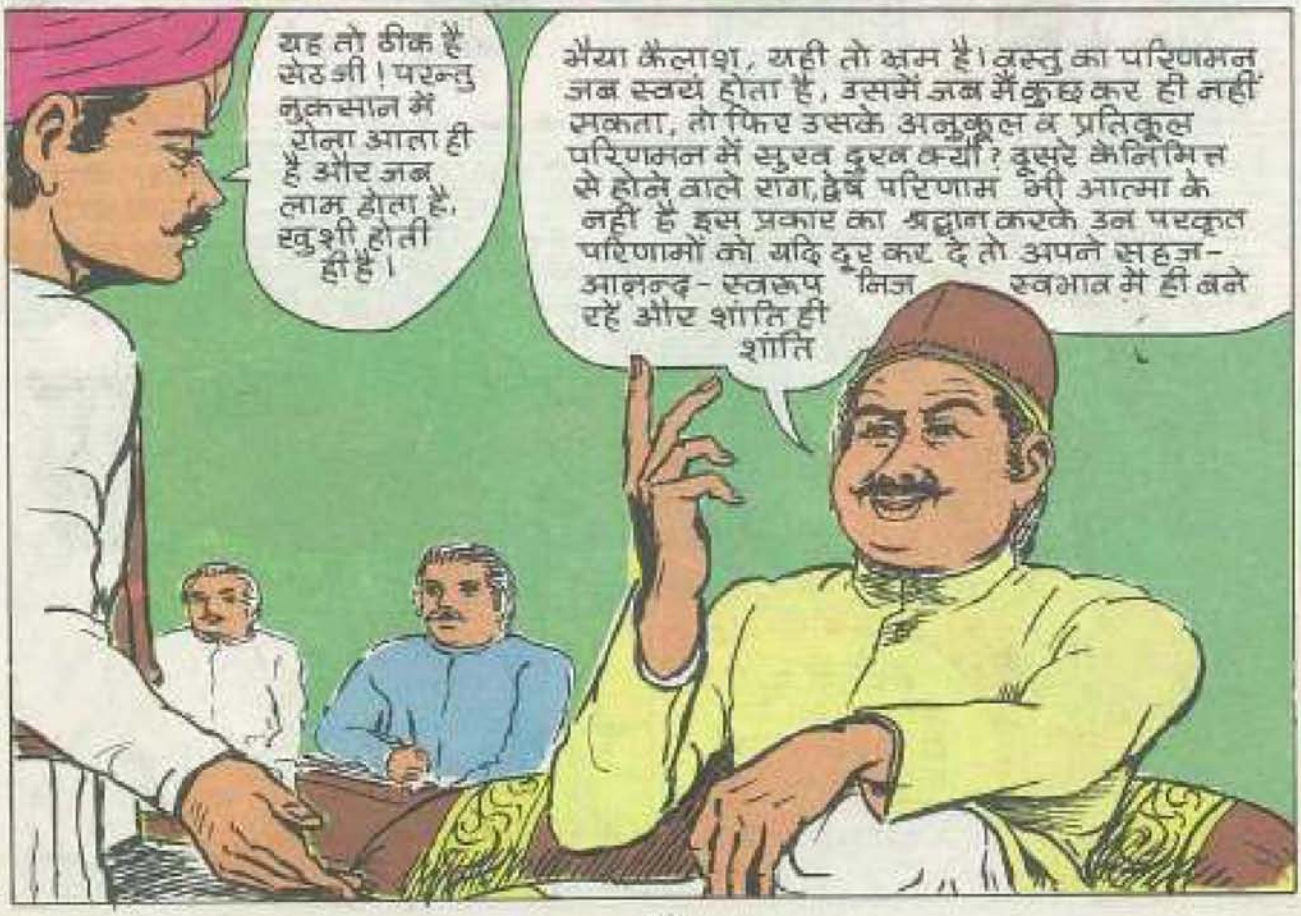
यह तो ठीक है सेठ जी! परन्तु नुकसान में रोना आता ही है और जब लाभ होता है, खुशी होती ही है।
भैया कैलाश, यही तो भ्रम है। वस्तु का परिणमन जब स्वयं होता है, उसमें जब मैं कुछ कर ही नहीं सकता, तो फिर उसके अनुकूल व प्रतिकूल परिणमन में सुख दुख क्यों? दूसरे के निमित्त से होने वाले राग, द्वेष परिणाम भी आत्मा के नहीं हैं इस प्रकार का श्रद्धान करके उन परकृत परिणामों को यदि दूर कर दे तो अपने सहज- आनन्द- स्वरूप निज स्वभाव में ही बने रहें और शांति ही शांति

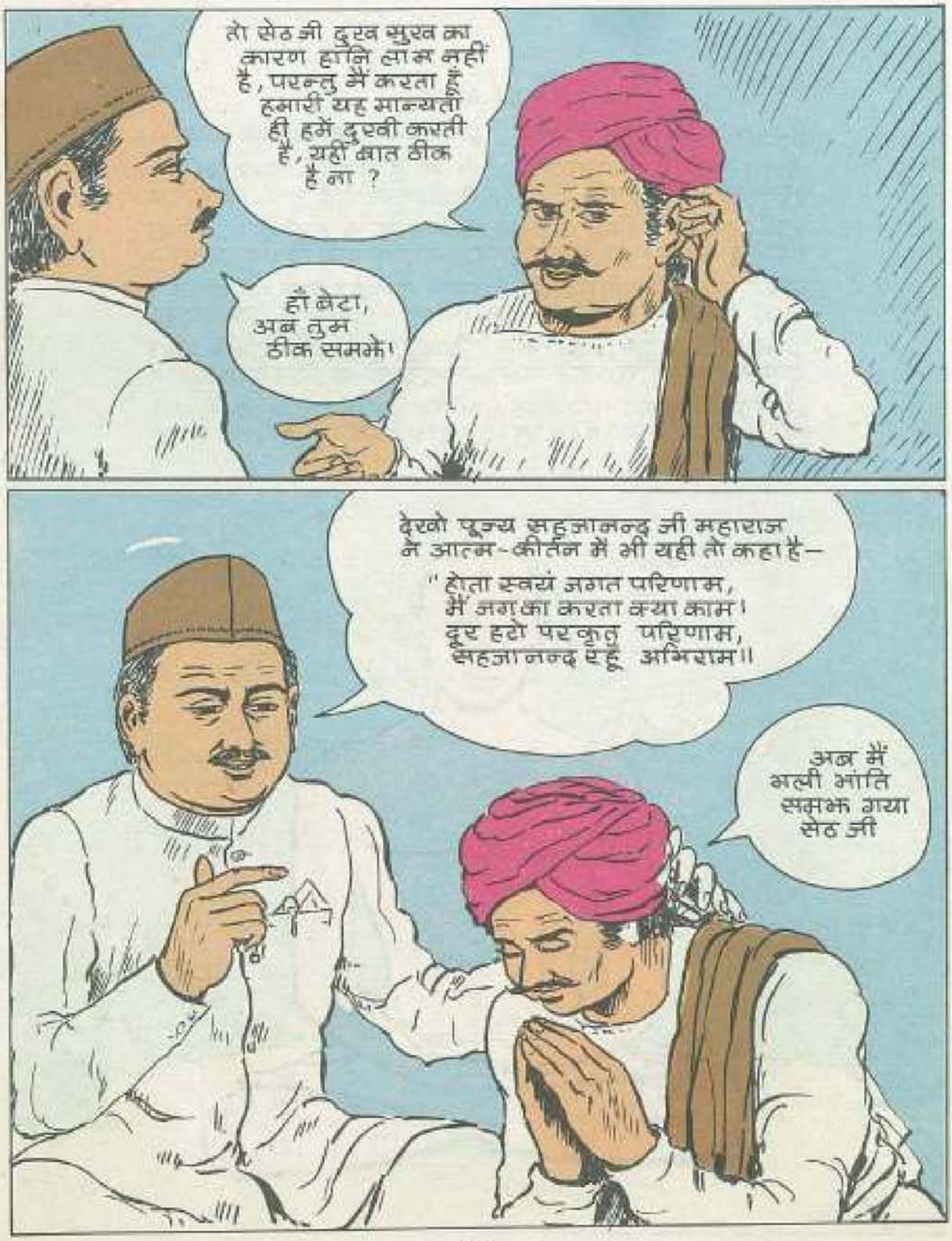

तो सेठ जी दुख सुख का कारण हानि लाभ नहीं है, परन्तु मैं करता हूँ हमारी यह मान्यता ही हमें दुखी करती है, यही बात ठीक है ना ?
हाँ बेटा, अब तुम ठीक समझे।
देखो पूज्य सहजानन्द जी महाराज ने आत्म-कीर्तन में भी यही तो कहा है–
" होता स्वयं जगत परिणाम,
मैं जग का करता क्या काम।
दूर हटो परकृत परिणाम,
सहजानन्द रहूँ अभिराम॥
अब मैं भली भांति समझ गया सेठ जी

"आत्म कीर्तन"

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता दृष्टा आतमराम ॥ टेक ॥
मैं वह हूँ जो हैं भगवान, जो मैं हूँ वह हैं भगवान ।
अन्तर यही ऊपरी ज्ञान, ये विराग यह राग वितान ॥

मम स्वरूप है सिद्ध समान, अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान।
किन्तु आश वश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अज्ञान ॥

सुख दुख दाता कोई न आन, मोह, राग, द्वेष दुख की खान ।
निज को निज पर को पर जान, फिर दुख का नहीं लेश निदान॥

जिन, शिव, ईश्वर, ब्रह्मा, राम, विष्णु, बुद्ध, हरि जिसके नाम।
राग त्याग पहुँचू निज धाम, आकुलता का फिर क्या काम ॥

होता स्वयं जगत परिणाम, मैं जग का करता क्या काम ।
दूर हटो परकृत परिणाम, सहजानन्द रहूँ अभिराम ॥

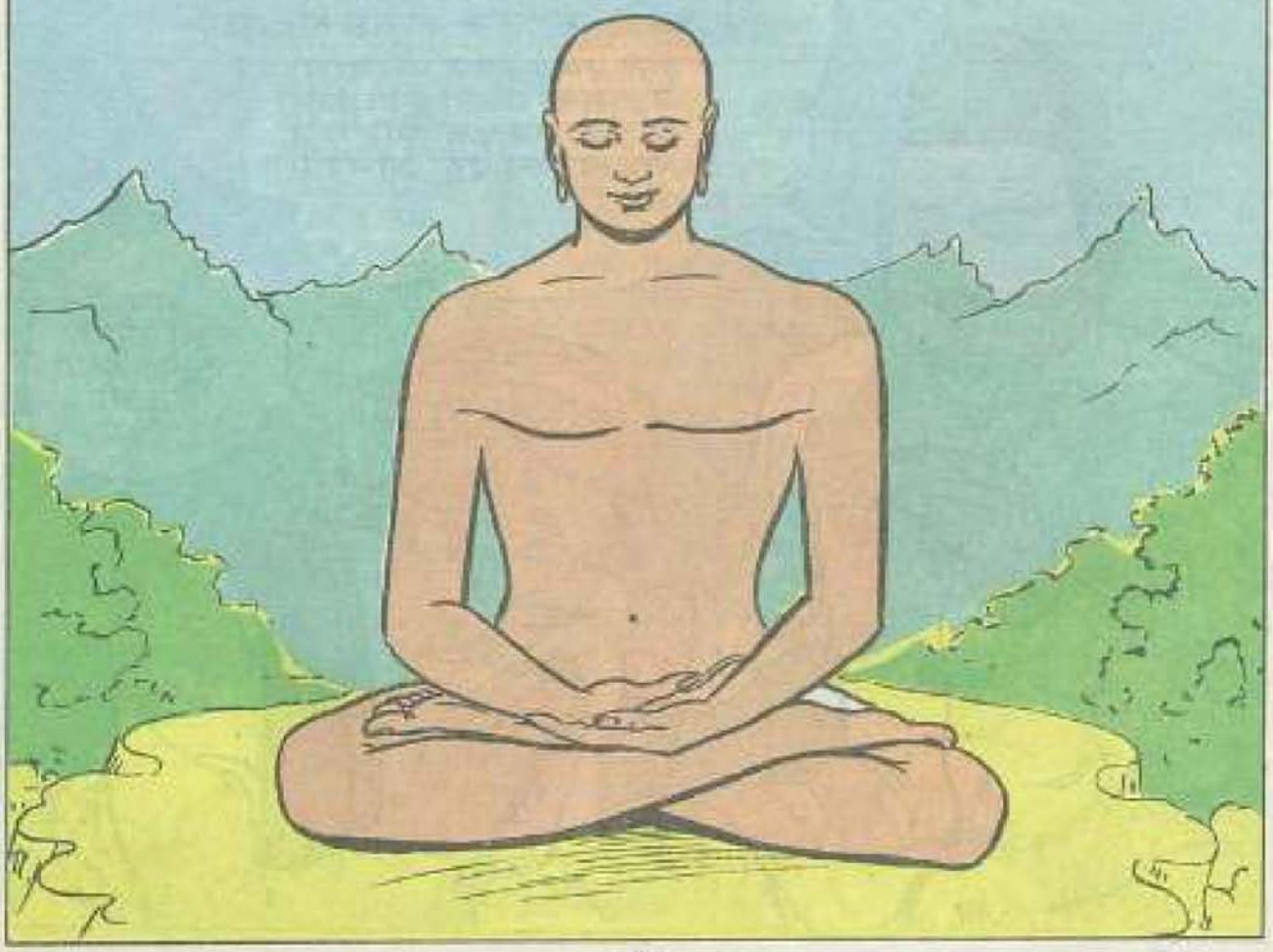

गाये जा गीत अपन के

मन को सदा ही प्रभु सुमरण में लगा कर उसे आनन्दमय रखना चाहिये। ईश्वर का स्मरण नित्य निरंतर सुख की वृद्धि करता है।

चारित्र–निर्माण मनुष्य का प्रधान उद्देश्य है चारित्र निर्माण से अभिप्राय व्यक्ति सद्गुणों के संवर्द्धन और विकास से उत्तम और सुयोग्य नागरिक बनकर अपनी व्यक्तिगत उन्नति के साथ–साथ अपने समाज और देश के अभ्युत्थान में पूर्ण रूप से सहयोग देने में समर्थ हो सके। मानव जीवन की सार्थकता इसी में है कि सद्गुणों की प्राप्ति के निमित्त निरन्तर प्रयत्नशील रहकर मनुष्य अपने चारित्रबल को अधिक दृढ़ करे। मनुष्य स्वभावतः ही अनुकरण शील प्रकृति का है वह दूसरों को जैसा करते देखता है स्वयं भी वैसा ही करने लगता है। परम पू० क्षु० मनोहर वर्णी सहजानन्द महाराज के प्रवचनों को डा० मूलचंद जी ने बालकों को सत्ज्ञान कराने हेतु एवं बाल संस्कार हेतु इस पुस्तक का रूप दिया। इस अंक के प्रकाशन में सहयोग श्रीमान धर्मानुरागी श्री सुमेर चंद जी के द्वारा सहजानन्द ग्रन्थ का मैं बहुत ही आभारी हूँ। इस चित्रकथा से सभी आत्मार्थी लाभ लेकर आत्मा की उन्नति करें।

ब्र० धर्मचंद शास्त्री

☆ सम्पादक – ब्र० धर्मचंद शास्त्री प्रतिष्ठाचार्य
☆ आलेख – डा० मूलचंद जी मुजफ्फरनगर
☆ चित्रकार – बनेसिंह
☆ प्रकाशन – आचार्य धर्म श्रुत ग्रन्थ माला जयपुर
☆ I.S.B.N. 81-85834-70-9
☆ मूल्य – 10 रुपये
☆ प्रकाशन वर्ष – 1996 वर्ष
☆ अंक 28
☆ प्रकाशन वर्ष – **जैन मन्दिर गुलाब वाटिका, लोनी रोड, दिल्ली**
– श्री समेर चंद जैन, 15 प्रेमपुरी, मुजफ्फरनगर

सौ० प्रेमलता पहाड़िया धर्मपत्नि श्री शिखर चन्द पहाड़िया
जयहिन्द इस्टेट नं. २-ए, दूसरा मंजिल, भूलेश्वर, बम्बई -२

PAHARIA

- PAHARIA SILK MILLS PVT. LTD
- SHIKHARCHAND AMITKUMAR
- PAHARIA INDUSTRIES
- PAHARIA TEXTILES CORPORATION
- PARAS SILK INDUSTRIES
- SAPNA SILK MILLS
- SHIKHARCHAND PREMLATA PAHARIA
- PAHARIA TEXTILES MILLS PVT. LTD
- PAHARIA TEXTILES INDUSTRIES
- PAHARIA UDYOG
- PAHARIA SYNTHETICS
- VARUN ENTERPRISES
- ANAND FABRICS
- PANCHULAL NIRMALDEVI PAHARIA

Kaushal Silk Mills Pvt. Ltd.

FACTORY :
875, KAROLI ROAD, OPP. PAHARIA COMPOUND, BHIWANDI, DIST. THANE.
TEL : 34243 ,22819, 22816
FAX : (02522) 31987

REGD. OFF
JAI HIND ESTATE NO. 2-A, 2ND FLOOR, DR. A.M. ROAD BHULESHWAR, BOMBAY- 400 002
TEL : 2069251, 2053065 2050996, FAX : 2060231